ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला—हिन्दी ग्रन्थाः

वीणापाणि के कम्पाउण्ड में

केशवचन्द्र वर्मा



भारतीय ज्ञानपीठ
काशी

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला
सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन



प्रथम संस्करण
१९६१
मूल्य तीन रुपये



प्रकाशक
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी



मुद्रक
बाबूलाल जैन फागुल्ल
सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी

अनुक्रम

•

आत्म-विज्ञापन

★ मेरी ये सारी कविताएँ 'प्रतिक्रियावादी' ह—यानी कुछ 'क्रियाओ' की 'प्रतिक्रिया' स्वरूप उपजी ह ।

★ मेरी ये कविताएँ अच्छे आदमीको अच्छी लगेगी और बुरे आदमी-को बुरी लगेंगी ।

★ मेरी ये कविताएँ मात्र शीपक पढनेवाले पाठका और पूरी रचना पढनेवाले पाठकाका समान रूपसे रोचक लगेगी क्योकि इनमे दोनो ही वतमान हैं ।

★ मेरी इन कविताओका इतिहास जितना रोचक है, भूगोल भी उतना ही महत्त्वपूण है । इतिहास बनानेवाली भौगोलिक परिस्थि-तिओका सही मूल्याकन ही बड लेखकको जम दता रहता है ।

★ मेरी इन कविताओमे वे समस्त गुण विद्यमान हैं जो किसी कविको 'सहज महान्' बनवाते है—पहिचानने वाले कभी नही रहते, आज भी नही है ।

* मेरी ये कविताएँ पहिले प्रकाशककी दृष्टिसे अच्छी लगी, फिर आलोचककी दृष्टिसे, फिर पाठककी दृष्टिसे। आप भी उसी दृष्टि क्रमसे देखें।

* मेरी इन कविताओंमें बड़ी सम्भावनाएँ निहित हैं—

(१) यदि यह संकलन चल गया तो प्रारम्भिक रचनाएँ भाग १, भाग २, भाग ३, भाग ४ के लिए मेरे पास बहुत मसाला है।

(२) समय मिलनेपर हर कविताके साथ एक लम्बा वक्तव्य भी जोड़ा जा सकता है जो कविताके अतिरिक्त अन्य सभी वस्तुओंपर प्रकाश छोड़ सकता है।

(३) एकदम प्रेम तो नहीं पर 'प्रेम' का आभास देनेवाली दो-चार चीज़ें इसमें इधर उधर पड़ी हैं, जो मेरी बुढ़ौतीमें प्रेम में डूबी-हुई आध्यात्मिकताके लिए काम आयेंगी।

* मेरी ये कविताएँ, जैसा कह ही चुका हूँ, अच्छे आदमीको अच्छी लगेंगी और बुरे आदमीको बुरी लगेंगी। इनका बुरा लगना आपके जीवित रहनेकी पहिचान है।

प्रयाग
होली, १९६१

—केशवचन्द्र वर्मा

वीणापाणिके कम्पाउण्डमें

एक सुझाव

सच कहता हूँ
अगर यक़ीन नहीं पडता है तो आज़मा कर देखिए
अब की आप आये तो ढूँढे जगह नहीं मिलेगी।
और यह रेंट कण्ट्रोलर तो आपको मकान देने से रहा!
सच कहता हूँ
आप जैसे तीन सौ पैंसठ वहाँ घूमते रहते है
लेकिन एलाटमेंट हुकुम उन्हें मिलने से रहा।
जी?
जी, पुराने मकान में तो अब गल्ला-गुदाम है।
उस ज़माने के भगवान आप रहे होंगे
आज के युग के तो भाग्यवान एम एल ए महाराज है।

वैसे ट्राई कर लीजिए
अगर अपनी तनख्वाह से ज्यादा किराया दे सकते हो
तो कहीं कोशिश कीजिए।
लेकिन वापस आसमान लौटने से पहिले
एक मेरा सुझाव है
जगह बहुत छोटी है
फिर भी काम लायक है
वहाँ रह-रह कर आप घूम फिर भी सकेंगे
मुमकिन है दो चार काम की बात भी कह जॉय।
जी, कहीं दूर नहीं
बिल्कुल पास।
आइए दिखा दूँ
यही है जगह जिसे मे कहता था
जी, यह है मरी कलम की निब।



लघु मानव का स्वागत

माया ब्रह्म और जीव की समस्त एक्टिंग पर
एक नया ड्राप सीन डाल कर
तमगा लगाये मनेजर की तरह
आप जो दर्शकों का अभिवादन करने के लिए प्रगटे
सो आपका स्वागत है।
फैमिली प्लैनिंग की समस्त योजनाओं को चुनौती ठाने
दोनों घूंसे भरपूर ताने,
आप जो सरोष प्रगटे
सो, आपका स्वागत है।
अस्पताल की नर्सें और डाक्टरनियाँ
जिन्हे देख बुआ और दादियों की तरह

अपना अपना नेग माँगने झपटीं
उन आपका स्वागत है !
स्वागत है आपका घर की उस चहारदिवारी में
जहाँ से सुबह सात बजे ही बस पकड़ने के लिए
अब्बाजान दफ्तर निकल जाते हैं ।
माता जी आपको पालने के लिए पास के स्कूल में
दस से पाँच तक पढाती है ।
स्वागत है आपका उन स्कूली दरवाज़ों पर
जिनमें एडमिशन कराने के लिए
डैडी कैजुअल-लीव लेकर
असफल चक्कर काटते है ।
स्वागत है आपका उन दरवाज़ों पर
जहाँ मक्खन लगाने वालों का चिर क्यू लगा हुआ है
स्वागत है आपका उन दरवाज़ों पर
जो हँस कर बैठायेंगे—पीठ पीछे गालियाँ बरसायेंगे ।
स्वागत है आपका उस दरवाज़े पर
जहाँ आपकी प्रियतमा
आई ए एस होने पर ही प्रेम की पूर्णता बतायेगी
आपको समझायेगी
और फिर मज़े से इक दिन किसी साहब की मेम बन
सहानुभूति पूर्ण रुख से सस्नेह तुम्हे कडम करवायेगी ।
पर
इन सब के बीच शायद कुछ ऐसे हो
जो तुम्हारे स्वागत में खीसे न निपोरें
आने पर तुम्हारे
हाथो में हथौड़े पकड़ायें
और समझायें
अपने इन स्वागत-द्वारों को ढहा दो

और
सिर पर तुम्हारे कुछ ऐसा बोझ दे मारें
जिससे तुम्हारी असंतुलित डुगडुग गर्दन सीधी हो जाय।
सीना तन जाय,
बाँह कसमसाय,
—उन सबके दरवाज़े पर तुम ख़ुद जाना
भोपू बजाना औ' बताना
तुम्हारे दरवाज़े पर मैं ख़ुद अपना स्वागत करता हूँ।



नाम महिमा

एक थे खुशदिल मिस्टर भट्ट।
उन्होंने अपने दो पुत्रों का
बड़े चाव से किया नामकरण—
(असाधारण, अनकॉमन, कनचिपक !)
एक का चपरगट्ट
और दूजे का श्रीयुत् बजरबट्ट।
गट्ट और बट्ट बंधु
मात्र नाम के ही सहारे जाने गये दिग्‌दिगंत में।

किन्तु—
नाम के ही कारण

गट्टू और बट्टू बंधुओं को
उनकी भरी जवानी में
[जब वे ललचाई आँखों से देखते थे
रंगी-चुंगी तितली सी फुदकने वाली
बाब्डकट बालों को नखरे से झटक कर
हर मिनट 'बॉश' कह कर पीछे फेंक देनेवाली
कूक भरते ही भौंहों को धनुष मार्का घुमाने वाली
'स्टैण्ड' पर अपने 'डेली प्रियतमों' को टाटा कहती हुई
लपक कर बस पर चढ़ जाने वाली सूरतें—
हाय मार कल्प कर रह जाते ।]
किसी लड़की ने नाममात्र को भी अपनाया नहीं ।
[कौन चपरगट्टू की 'चहेती' कहलाती भला ?
कौन बजरबट्टू को 'बालमा' बुलाती भला ?]

नाम के ही कारण गट्टू और बट्टू बंधु
इम्तहान पास कर लेने पर भी
अफसरी के इंटरव्यू से हरबार निकाल दिये गये
(कौन चपरगट्टुओं की डॉट-फटकार मानता ?)
अध्यापकी चाही
पर कालिज की सारी दीवारों पर
अपने नामों का भ्रष्ट विज्ञापन देखने से सहम उठे ।
वकालत की पास
पर मुवक्किल एक पास नहीं फटका ।
नेतागिरी करने की ठानी ।
आम कार्यकर्ता के रूप में सबने उन्हें स्वीकारा
पर इलेक्शन में इस नाम को
अपनी पार्टी का टिकट देने से सबने साफ इन्कारा
झकमारा इंश्योरेंस-एजेण्टी तक में

सब के दरवाज़ों पर नामो की विभीषिका ने किंतु
झपट कर 'बन्द हो जा समसम' की लेबिल लगा दी !'
हर ओर सुनकर अपनी नाम-महिमा
जब उन्होंने उसे बदलने की सोची
तब पता चला—
ख़ुशदिल मिस्टर मट्टू वसीयत कर गये थे—
नामों मे तनिक सा भी परिवर्तन करने से
(दो ऑखोंवाली क्या)
कानी कौडी भी नहीं पाओगे बच्चू ।

पथहारे, मनमारे, तनजारे
गट्टू और बट्टू बन्धुओ को
सहसा एक 'वेलकम' का बोर्ड दिखा—
साहित्य साधको के अखाडे का महान् गेट ।
पकड कर कलम की उँगली
घुस गये दोनो ऑख मूँद कर उसमें बोल कर—
जय मिस्टर मट्टू की !
जय बजरबट्टू की !!
जय चपरगट्टू की !!!
जाना उन्होंने इस गेट के भीतर
नामों का कोई भी महत्त्व नहीं ।
एक से-एक गूढ़ और मूढ नाम हर कोने में विराजते
छद्म नामों से लोग जिन्हें जानते !
दोनों को नामों की शक्ति आज पहिली बार दीख पडी ।

गट्टू और बट्टू बन्धु
अब सचमुच कृतज्ञ हैं ख़ुशदिल मिस्टर मट्टू के
जिन्होंने उन्हें ऐसे नाम देकर
'साहित्यिक कॉलम' लिखने में सिद्धहस्त किया ।

३

छद्मनाम लेकर वे पेट से ही आये
इसी कारण
हर पत्रिका उन्हें फुसलाती, अपनाती है।
लगे हाथो यश की टोकरी दे जाती है
उन्हें बारम्बार नोटिस में लाती है।

छद्मनामों की बढ़ती हुई माँग को
पूरा करने के हेतु
गद्दुओ ने पेटजन्य छद्मनामों पर भी धरे कुछ और नाम—
बन वे
चक्रधर (० घर !)
यूँ हलन्त (हल का अन्त ही देते कर)
बूँ बलन्त (बुल की लत खाते और चिल्लाते)
अनुस्वार (मिमियाते स्वर से सबको गुहराते)
फूत्कार ('फूत' करके कार से भाग जाते)
नचिकेता (नि–'केता + केता नवि आवै एक रूप धरि के)
भ्रमरानन्द (झूठा भ्रम + मरानन्द—असली रूप देखि के !!)
एकलव्य (कलव्य को ए ऽ ए ऽ पुकारते ही रहे जीवन भर !
लव्य (लन करने योग्य) उन्हें मिला सिर्फ एक ही !)
पुष्पदन्त (बूढ़े हो चले—मुँह पोपला–दाँत पुष्प से–कुछ भी न
खा पाये।)
समुद्रगुप्त (लेख वेख क्या है,गुप्त कर दें समन्दर को भी जो !)
प्रकटित हुए वे विविध वेश, अमित रूप
ठौर-ठौर, पेज-पेज, पक्तिनद्ध
कुछ ही दिनों में वे
समुच्चरित हुए
जन-मन में
कन कन में।

लोग कहते हैं–
जय हो बजरबट्टू की
जय हो चपरगट्टू की।
पर वे कहते हैं–
जय हो
जय हो सिर्फ ख़ुशदिल मिस्टर मट्टू की।

चरन कमल बदौ   एक भजन

मेरा मन चरनों मे लागि रहा ।
जिन चरणो ने भापण हित
दिक् दिक् मैदान मँझाए
अगनित चरन चुनाव सग में
चले गये डोरियाए ।
जिनके ध्यान मात्र से खुलता
कौंसिल द्वार सुहावन,
हाथ उठावन, जीव जुडावन
एमएलए गीरी माँगि रहा ।
मेरा मन चरनों में लागि रहा ।

जिनके नख से द्रवै जग तरनि
मातु-नौकरी गगा
चरन कमल माखन से लिपटे
अपहुँच कचन अगा !!
जिनकी यह रतधूर सीस पै
धरत प्रमोशन आवै
पहुँचावै जो अपग्रेड मे
ताही में मन पागि रहा ।
मेरा मन चरनो मे लागि रहा !

जिनके चरन प्रताप बनाते
लेखक कवि विज्ञानी ।
जो छपवाते लैला मजनूँ वाली
प्रेम कहानी–
युग का गायक जिन्हें बनाते
धूल झोंकि आँखो म,
उनकी अशरण शरण ग्रहण कर
मन सब दुविधा त्यागि रहा ।
मेरा मन चरनों में लागि रहा !

सकल सिद्धि सुख सम्पति दायनि
महिमा चरन छुई की
आदाबअर्ज़, सलाम, बदगी
अब सब लागन पीकी

जहँ जहँ चरन पड़ै ये तहँ तहँ
माटी सोन बनावै–
स्वर्णधूरि तिनहीं चरनन को
लेने को मन भागि रहा।
मेरा मन चरनों मे लागि रहा।*



* श्रीमती विद्यावती कोकिलकी पहिली पंक्तिके लिए आभार।

नया साल

घड़ी की सूइयाँ खिसकीं
कलेण्डर के पन्ने फटे
पुराना पेज हटा, ताजा वर्क़ सामने आया।
यह लो नया साल शुरू हुआ।
चुन चुन कर लिखे हुए ग्रीटिंग कार्ड
डाकिये लाने लगे!
[झूठमूठ]
खीसयुक्त अभिवादन बधाई का वातावरण छा गया।
अपने हाथों में ताज़े फूलों के मोरपखी गुच्छे लिये
तुम हो कि दौड़ चले अपनी 'ट्ट ट्ट' के पास
बटनहोल में 'स्वीट पी' लगा

शुभकामनाओं की लम्बी फेहरिस्त वाली कवि
के साथ।
छोड़ा क्या ?
यह है कैलेण्डर के पन्नों का पिटा हुआ
सालाना मज़ाक—
[बार बार एक सा]
सोचो,
जिसे आज कर रहे हो
वही कल परसों या नरसों करते
तो कौन सी प्रेयसी
मोरपखी गुच्छे फेंक, कविता फाड डालती ?

कलेण्डर के पन्ने बदलने पर
खुश हों वे
जिनकी जयन्तियाँ पड़ेंगी इस साल
[मिलेंगे अभिनन्दन ग्रन्थ स्थूलकाय !]
जिनके जन्म दिन पर
बदनगार बनाने भर को
अनगिन बधाइयों के रंगीन तारफार्म—
भरभराएँगे ।
अपने सेट-पोज़ों में फोटो खिंचाएँगे
हाथ जोड़ जोड़ दावत खिलाएँगे ।

फिक्र हो उन्हें
जिन्हें इस साल कराना है पार्टी-कन्वेंशन, 'जन आन्दोलन'
उल्लू करना है सीधा जिन्हें
चन्दा वसूल कर, लड कर बाई-इलेक्शन

फिक्र हो उन्हें
जो अपनी तिजोरियों में बन्द
सोने की मोटी ईंट बैलेंस शीट पर तुलते देख
सोचेंगे–कैसे अब की इन्कमटैक्स गायब करें ?
फिक्र हो उन्हें
जिनको अपनी कलम और ज़बान बेच कर
बाजार रहते दाम खड़े कर लेना है।

बोलो,
इन नक्शे में तुम्हारा यह
ग्रीटिंग कार्ड,
कहाँ फिट करूँ ?
मोरपखी गुच्छे और रूमानी कविता !
इस सेटिंग में होंगे मात्र
द्रविड प्राणायाम !

घड़ी की ये खिसकती सुइयाँ–
कलेंडर के फर्र फर्र फटते पन्ने–
इन्हें सिर्फ देखते जाओ
इन्हें सिर्फ सुनते जाओ
सिर्फ कहने सुनने से मित्र !
नया कभी आया नहीं !!



प्यार का रोग

वह थे मेरे दोस्त
मुझे अक्सर चौराहे पर मिल जाते
घंटों खड़े खडे हम दोनों
कुल रिश्वतों की लिस्ट बनाते
अच्छे चंगे भले एक दिन
सुबह सुबह ही आये घर पर
खोये खोये से गुमसुम से
लगे बताने मुझसे आ कर—

'जाने क्या हो गया मुझे है ? नित चिन्तातुर हूँ मै व्याकुल
आँखें पुरनम, दिल कुछ धुक धुक, किसी व्यथा मे जीता घुल घुल
मैंने उनकी नब्ज़ थाम ली—बोले 'जीवन भार हो गया।'
समझ गया मै रोग मियाँ का कहा—'आपको प्यार हो गया।'

यह सक्रामक रोग

सिनेमा से अक्सर पैदा होता

जिसे लगा यह एक बार

वह आठ आठ आँसू रोता है

यह हल्की फुल्की टी० बी० है

जो कि आपको चित कर देग

मनीबेग की मारी सूजन

यह मिनटों म ही हर लेगा ।

कभी कभी छुतिहा बीमारी

यह कालिज से

पर लगने वालों को तो

यह चलती राहों लग

यह कि किसी दिन बुरी जगह ले जाकर तु

यह कि किसी दिन अनजाने में कविता तुम

यह कि प्राण, प्रेयसि औ प्रियतम, वाहियात

यह कि नौकरी से हुजूर का पत्ता चटपट क

यह कि चार दिन में ही चेहरा चूसा आम

यह कि दोस्तों की मजलिस मे टॉपिक खुद

यह कि अत म स्वय आपको उल्टा बुद्धू

यह कि तुम्हारी ही नज़रो म तुमको ही ख

अब तक कितने लगे—

लगेंगे कितने इस 'पचइती-

तुम भी चाहो तो

इसका नेचर क्योर है सही,
पर होता वह धीरे धीरे
यह नासूर हवा हो जाता
कभी कभी बिन फाड़े चीरे
अक्सर तो इन्सल्ट करारी
रामबाण सी हो जाती है—
जो कि बिना मरहम पट्टी के
इस जहान से छुटवाती है।

अभी अभी का रोग अगर है बदनामी का चूरन खाओ
मर्ज़ पुराना हो तो थुक्का-फजीहत का काढ़ा पी जाओ
पर इलाज से बेहतर माना जाता है वह रोग बचाना
इसीलिए मै फर्ज़ समझता हूँ कुछ गुर की बात बताना—

भरी जवानी के आलम में
नहा चाँदनी मे तुम टहलो
टहलो भी तो किसी
एडीटर के सग म बस गुमसुम टहलो—
जो कि चाँद पर हमले के
क़िस्से कुछ तुमको बतलाएगा।
जो कि रूस औ अमरीका के
नक़ली चन्दा उड़वाएगा ॥

और सिनेमा जाना तो—
बिन देखे ही बाहर आ जाना।
जाकर जमुहाना औंघाना—
मूँगफली के दाने खाना—!!
[चाहे गिरियाना !]

जग की सब सुन्दरता को तुम मृत-नानी का रूप समझना
उनसे डरना, उनसे बचना, सोच समझ कर कहीं उलझना।

अगर उलझना भी तो आँखों पर
धूपी-चश्मा हो प्यारे!
चश्मे के नीचे नीचे
अपराध सभी है क्षम्य तुम्हारे!

शान्ति का दूत

रिक्शा रुका
टुड्चू वान की दूकान के आगे।
उतर पडा शान्ति का दूत
वह कवि !
जिसकी बगल मे एक नहा
तीन चार फाइलें था—
कोई कविताओ की, कोई विज्ञापनो की
कोई मेनीफेस्टों की
कोई उन किताबी पन्नो की जिसे उसने
बडी मेहनत से, हिम्मत से
पब्लिक-लाइब्रेरी की किताबों से उडाये थे।

उसके बाल
साइबेरिया के जगलो की तरह बिखरे थे
मत्था कुछ उभरा सा चमकता सा
जैसे वहाँ की पडी बर्फ़—उसके दिमाग सी
जमी हुई।
गालो में गड्ढे
जैसे कैस्पियन सागर देख कर उसने बनवाये हो!
नाक कुछ चमकती—कज्ज़ाको सरीखी
स्वर कुछ तेज़—मास्को रेडियो जैसा
पहिले की पैंट शर्ट
अब बदल गये थे कुर्ते पैजामे
और मोटे फ्रेम के धूपी चश्मे से
जैसे पीटर्सबर्ग हो गया हो उसकी देह पर लेनिनग्राड।
एशिया के बारे मे उसके विचार पहिले बहुत बोदे थे।
लेकिन लोगों के कहने सुनने से
चीन के लिए
उसने अपने मन मे इधर
धीरे धीरे बहुत पुख्ता विचारधारा बना ली थी
बिल्कुल चीन की दीवार सी।
बहरहाल, रिक्शा रुका
हुङ् चू वान की दूकान के आगे।
देकर चवन्नी उसे टरकाया
'अधिक किचकिच मत मचाओ
हो रहा है दाँत मे कुछ दर्द
ख़ुश रहो, दूसरी सवारी ढूँढो।'
रिक्शावाला बेचारा
टुकुर टुकुर ताकता खिसक चला
जैसे कोई छायावादी कवि

प्रयोगवादियों की मार से भगा हो।
शान्ति का वह दूत, भीतर घुसा दूकान में।
दाँत के डॉक्टर की चीनी दूकान—
चीनी सामान—
चीनी सारा इन्तज़ाम—
सब कुछ कितना अच्छा लगा उसे
जैसे उसकी कल्पना को नया द्वार हो मिला।
यह चारों तरफ दाँतों के नये नये सेट
लटके हुए चित्र
हँसती हुई मेमों के
जिन्होंने अपने दाँत इसी दूकान से बनवाये थे।
उसने सोचा
दाँत ही प्रगति का चिह्न है।
पृथ्वीपुत्रों का उपजाया यह सारा अन्न बेकार है
अगर दाँत नहीं है ऐसे जो
उन्हें बत्तीस बार चबा चबा कर खा सकें।
फिर उसे ग्लानि हुई
यह भी देश कैसा है
जहाँ सभी डॉक्टर है
पेट के, नाक के, कान के
हाथ के, पाँव के—किन्तु नहीं दाँत के!
दाँत यह अस्त्र है नारी अबलाओं का
पीसित प्रताडित वर्ग का
इसीलिए इसका महत्त्व चीनियों ने आँका है।
उसने देखा
छाता लिये चीनी सुन्दरी का कलेण्डर
जो उसकी अपनी प्रेयसी से हज़ार गुना सुन्दर थी।
उसने सोचा

उसी तरह की हुगी यह उसके लिए भी लाएगा।
और यह आरामकुर्सी
चीनी मखमल म लपटी
जिस पर बैठने के सुख म
दॉत क्या, इसान मर तक तुड़वाने म हिचके नहीं।
काश, ऐसी कुर्सी मेरे ड्राइगरूम म भी होती।
तब तक हुट्‌चु वान पदा हटा, भीतर घुसा।
हुट्‌चु वान।
उसे लगा साक्षात् माओ का प्रतिनिधि
वही रूप, वही रग, वही ढग
जैसे तस्वीर में उसने अभी देखा था।
कवि ने बडे आर्त स्वर में कहा
[जैसे उसके कठ में चीन की शोक की नदी हो उमड़ी हुई]
'साथी! मेरा यह पिछला दॉत
कई दिन से हिलता चला आता है
बहुत तकलीफदेह, फिर भी उखड़ता नहीं
बिल्कुल बुर्जुवा कल्चर जैसा।
इसको तुम नष्ट करो
इसको तुम भ्रष्ट करो
क्रान्तिदूत! मुझको इस कष्ट से किसी भॉति मुक्त करो।
उखड गया दॉंत।
पर लम्बा बिल देख वह बोल उठा चतुर कवि
'बन्धु मेरे! मै बहुत बदकिस्मती से हो गया इस देश में पैदा
नहीं मै कर्म से, निज धर्म से और सचमुच शर्म से कहता
'*मै तुम्हारा बन्धु हूँ।*'
मुझे यह चीन बहुत अच्छा लगता है
[अपने स्वरो मे उसने अफ़ीम की मादकता उतारी—
और फिर बोला]

५

'चाय और चावल के बिना मै जी नहा सकता
रेशम भी मैं चुरा छिपा कर घर मे पहिन ही लेता हूँ
सच मानो मै चाहता हूँ कि चीनी आत्मा किसी तरह
मेरे अन्दर प्रवेश कर जाय।
पैसे से मै लाचार हूँ
मै तुम्हारे लिए साहित्यिक-विज्ञापन लिख सकता हूँ
चाहो तो साइनबोर्ड भी तुम्हारा अपने मित्र से लिखा दूँगा।
लेकिन मेरी जान छोड दो।'
और बहुत किचकिच के बाद
एक साहित्यिक विज्ञापन लिखने पर तोड हुआ।
जान छूटी, बाहर आये।

दिन भर के काम से
और इस बुर्जुवा कल्चर वाले दाँत के दर्द से
थक कर जल्दी ही वह सोने लगा।
आँख लगी, सपने जगे
शांतिसम्मेलन के सपने उसे आने लगे।
उसे लगा वह भी एक प्रतिनिधि है
जो दूसरों के मुक़ाबिले अपनी बात ज़ोर से
मेज़ पर घूँसे पटक कहता था
'चुनचुङ् चुनचुङ् चुनचुङ्
शी याग होची शुन लुग
शुन चीं चुन चुङ् चुङ् चुङ्।'
रात भर कानों में उसके गूँजा किये।
साथ ही उन तालियों की तडतडाहट भी
जो साथ में बजती थी, बजती ही जाती थी।
उसने संकेत किया
कोरिया ट्यूनीशिया का

ईरान के तेल का
मिस्र और हंगरी का।
'चुनचुड़् चुनचुड़् चुनचुड़्'
भाषणों के अनुवाद होते रहे, तालियाँ बजतीं रहीं।
सुबह होते होते
उसने बिस्तर पर देखा
सचमुच कोरिया मैदान।
सैकड़ों मच्छरों की पिटी हुई लाशें
एकाध अब भी चुनचुड़् चुनचुड़् करते उड़ते थे।
उसने हथेली देखी
लाल लाल
मच्छरों के खून से रंगी हुई।
बहुत देर बाद कवि
भाषण और तालियों का यह रहस्य जान सका !!

प्रेम-कथा

उस रात
सिनेमा से आकर
कुछ भावुक हो
जैसे अपने को समझ लिया उस प्रेमकथा के हीरो-सा
मै उन्मन सा
खोया खोया
ऑखें भारी
रह रह करता
दिल हुक हुक-सा
गरज़े सब लक्षण वही
जो कि होते है

पहुँचे हुए सिद्ध प्रेमी जन के।
मै बैठा
जैसे ठुनुँग पडी हो मेरी काया।
मै भरमाया,
कुछ शरमाया,
कुछ अलसाई-सी करवट ले
जैसे हो एक भूमिका महाकाव्य की
मैंने उनको गोहराया
रहने भी दो पानसान यह
आओ बैठो!
यह देखो दूधिया चाँदनी—
शुद्ध वनस्पति घी सी
जिसमें नहीं मिलावट
आज बिखेरी है धरती पर
देख देख हमको तुमको
जैसे यह हँसती।
कहते कहते
मेरा गला अचानक ही भर आया—
प्रेम काव्य था!
पर वह तो बस काठ सरीखी
नहीं तनिक भी
उन पर इसका जादू छाया
तब मैंने नम्बर दो मन्तर मारा!
तुम कितना अच्छा गाती हो
शाम सुबह जब हरमुनियाँ ले
तुम छत पर घूँघट निकाल कुछ
गाना-सा जब गाती हो
तब पास पडोस मुहल्लेवाले

अपनी छत से
कैसी कैसी नज़रो से तुमको देखा करते है !
बहुत 'पापुलर' हो तुम प्यारी
तुम पर वारी
मै बलिहारी ।
उनके होठ खुले
मै जीत गया तब ।
मैने सोचा
आखिर को मै भी तो कवि हूँ
जब चाहूँ तो जिसका वैसा मूड बना दूँ
पर वे केवल इतना बोलीं
'आप नहीं लाये
वह कपडा धोनेवाला साबुन !'

और मै
फिर इस पर क्या कहता ?
मै जैसे बिल्कुल खिसिया कर आसमान मे लगा देखने ।
जैसे चॉद सितारो को मै लगा कोसने ।
मेरी झपी झेंपी सी वे ऑखें
झुकी झुकी सी वही निगाहें ।
इनविजलेटरने
पकड लिया हो
इम्तहान म जैसे मुझे नक़ल करते ही ।
जैसे मेरी प्यारी कविता
सम्पादक ने
'कूडा' लिख कर वापस की हो ।
अब कि झेंप वाली जमुहाई
मुझको आने लगी दनादन ।

लगा
सामने की अल्मारी पर रक्खी
ये देव बिहारी
शेली कीट्स
ये पंत निराला
सभी झूठ हैं
केवल सच है वही हमारी
कपडा धोने वाली टिकिया ।

जाडे की एक सुबह मे चारो तरफ कोहरे से लिपटा हुआ चार बजे के आसपास, चॉदतारा बीडी और कैंची सिगरेट के धुएँ से आक्रान्त, प्रयाग स्टेशन से छूटनेवाला रेलगाडी का ऐसा डिब्बा जिसकी खिडकियो पर शीशा और झिलमिली चढी हुई है

डिब्बे की हर सवारी साबुत होल्डाल सी पडी हुई। किसी के मुँह पर यह विरोध करने की हिम्मत नहीं कि 'डिब्बे मे जगह नहीं दूसरे में जाओ !'



नोट—उपरोक्त कविता छोटी कविताओंके स्टाइल्में है। शीर्षक बडा हो जानेके लिए तदनुसार कवि क्षमाप्रार्थी है।

जीवन सौंदर्य

गये स्वर्ग से पुन ढकेले
समझे पृथ्वी को नदनवन
आ ही गये यहाँ जब आखिर
ख़ाह्मख़ाह भला क्या क्रन्दन ?
धन्य आज का पुण्य दिवस क्षण
बडी बात करके दिखला दी
सही सलामत प्रकट हो गये
माँ की तुमने जान नहीं ली।
मगल गायन
मगल वादन
क्यो न मनायें जन्मोत्सव जन ?

बाद मुद्दतों
के फँस पाया
है चडूल पुराना गोपन !

ओ माँ ! वह रोता है उसको
बोतल का ही दूध पिलाओ।
एक बार तो अंक लगा फिर
चाहे दाई को दे जाओ।
'लाऽलाऽलाऽला' लोरी गाओ
गाडी मे उसको टहलाओ।
घुमा घुमा कर हवा खिलाओ
बेबी का कुछ मन बहलाओ।
'ड्रीमलैंड' की परियो आओ
मुन्ना को योरोप ले जाओ
'हिन्दुस्तान बहुत बोगस है
इसे अमरिकन हवा खिलाओ!'

सूदखोर के ऋण सा है रे!
चिर विकासमय मानव जीवन।
तन चिल्लाता वस्त्र और दो
पेट चीख़ता भोजन भोजन!
नटखट बालक का अब केवल
भागदौड मे ही लगता मन
धीमे धीमे सिखी सुराही
भारू लगता घर का आँगन!

देखा करता उत्सुक लोचन
दादा का वह धूम्रपान स्वन ।
उनकी दाब चवन्नी, पीते
हज़रत सिगरेट कहीं हो मगन ।
पैसा लाओ घर से अपने
उसके साथी यही सिखाते
इसी शर्त पर चाँदतड़ी मे
उसकी कभी न आँख मुँदाते ।

अब न रहे वे राजा रानी
अब हिसाब चढ़ आया सिर पर !
हिंदी इंगलिश को भी पढ़ना !
प्राण हो गये उनको दूभर !!
इधर गदर के कारण बोले
जाते, उधर आँख है ऊपर—
अद्धाचप वह काट रहा है
गिरता वह कनकौवा भूपर ।
मानसून समझाते टीचर
उधर गेंद सा है मन नृत्यित
कब छोड़ेंगे प्राण ? सोच यह
होता रह रह-हृदय उच्छ्वसित
मोहन के ही सग अगर माँ
आज सिनेमा जाने देतीं
हंटरवाली चित्र दिखा कर
वीर बहादुर बनवा लेतीं ।

दसवाँ दर्जा
पास कर गये
'बालसखा' भूला चिरपरिचित
उस भोले किशोर
का जीवन
'माया' की फ़ाइल पर निमित।
नारी उसको प्रश्न बन गई
देखा करता भय से विस्मित
साथ खेलने वाली उसको
अब कर जाती है रोमाचित।
यह कैसा परिवर्तन जिसको
देख युवक हो गया भौचकित।
कविता की कुछ मधुर पक्तियाँ
अधरों पर उसके परिचालित
कहते, पढ़ते, सुनते-सुनते—
चाँद हो गया उसे मधुर स्मित
और अकेलेपन मे उसको
वही रात अब लगती विस्तृत।
अब वसत से है घबडाते
विरहाकुल मन शकित कपित।
हर किताब के हर पन्ने पर
अब केवल 'उसकी' छबि चित्रित।

गुड्डा गुडिया भूल गई
अब नारी का भी निखरा यौवन
फ्राक आदि को दे तिलाजलि
साड़ी में उनका तन शोभन

इधर-उधर सब ऊपर-नीचे
बहुत मास बढ़ गया देह पर
उनका फैशन औ फैशन-व्यय
भार हो गया प्रतनु गेह पर।
आँखों मे कुछ हुई गड़बड़ी
बातें करता शकर मे सनित
जितनी कब्रें बनवा सकता
उतनी रूपश्री चिर दापित।
जीवन केवल चाय और
स्वेटर बुनने तक ही अब सीमित
पति कम से कम हो पी० सी० एम०
अन्तर्मन मे सब के गुफित!
पति-पत्नी अब बने प्रणयिजन!
हार, परस्पर करते वदन।
जो चाहा वह पा न सके
निर्मम जग का कैसा सघर्षण।
नदन वन के वासी को है
मिली सगी पूतना की बहन
हृष्टपुष्ट है उतना स्वर भी
हृष्टपुष्ट है जितना रे तन!

सुबह वही आफिस का पोथा
दिन भर साहब का अभिनदन
बालाई तरकारी ले
सध्या को करते गृह परिगमन।
बच्चे बाबू जी की अचकन
टाँग रहे लेकर खूँटी पर

तब तक कल्लो की माँ ने
रख दिया वहा ला हुक्का भर कर।
तकिये का आलम्बन ले कर
गुड गुड करने लगे धूम्र स्वर
और विचारो के रिक्शे पर
बैठ कल्पना उडी बिना पर
हत्तेरी आफिस की ऐसी-तैसी
जिससे चौपट जीवन
साहब की इक क़लम मात्र से
होता आरोहन अवरोहन।
अच्छा खासा लिखा पढा था
मै भी साहब हो सकता था
कितनो के पिछले रिकार्ड
बस एक शब्द से धो सकता था।
कितना अच्छा होता यदि
डिप्टीगीरी करती अभिनन्दन
कितने बाबू नायब साहब
करते मेरा नत मद चुम्बन !
दुनिया भर की खुराफात—
मीटिंग का होता तुरत सभापति
कौन नियत्रण करता फिर ?
मनचाही होती जीवन की गति।
अगर मास्टर ही बन जाता
तो गरमी की छुट्टी पाता
तेली के बैलो-सा फिर क्यो
दिन भर जुता हुआ अकुलाता ?
और रेल का बाबू बनता
तो भी होता जीवन पावन

पाँच साल की वर्दी में
घर भर का होता ठाठ सुशोभन ।
राशन वस्त्र द्वार पर दोनों
पडित नाऊवन् चिचियाते
पर इन मरभुक्खे परजो को
कभी न सतोषित कर पाते !
बच्चू है कि पढ़े जाते है
करते केवल डिग्री सचित
केवल टॅंढ ही पेल रहे है
देखो क्या करते है निश्चित !
जीवन इन्हीं नालियो से बहता जाता है नित्य उपक्षित
प्रेम घृणा से औ प्रतिभा केवल आडम्बर से ही पूजित !

लगा चलने झुक लाठी टेक
वृद्ध जीवन के प्रति अनुदार
खाँसी, खटिया, चश्मा, हुक्का,
उसके साथी केवल चार !
कहाँ गई उसकी मधुवाणी
जिससे प्रिय का था मोहा मन ?
किससे सीख लिया बर्राना ?
चिडचिड़पन होता चिर नूतन !
दुनिया भर की सभी गालियाँ
राम नाम का मत्र गई बन
जपते प्रात सध्या जिनको
गढते नव-मोहन-सबोधन ।
हुई सभी इन्द्रियाँ शिथिल पर,
सागर मीना अब भी आगे--

रहने दो, कहने को उनके
अटके अब भी प्राण अभागे ।
वृद्ध कराता सन ऐसे केशों का
अब ख़िजाबमय रजन
चन्द्रमुखी फिर बाबा कह कर
कर बैठे न कहां अभिनन्दन ।
मिर्च मसाले की शौक़ीनी
नित्य प्रति अब बढ़ती जाती
घर की क़िचकिच में उनकी
मन पद्मकली विकसित हो जाती ।
द्रव्य जुटाता ही जाता है
अब भी वह निरीह वृद्धजन
ज्ञात नहीं है स्वर्ग नरक में
चलती रिश्वत नहा चिरन्तन ।
आया उन्हें बुख़ार उसी में खाँसी चढ़ी बढ़ी फिर तिल्ली
बुढ़ऊ ने तन त्याग किया औ' गई आत्मा सीधे दिल्ली ।

अन्तर्राष्ट्रीय बन नभ में
लगी घूमने घन-सी घिर घिर
अवसर मिलते ही मानवतन
धारण करने को आकुल फिर ।।

बुढ़ऊ के मरने पर उनके
सब पड़ोस मे यही मुखर स्वर-
'चलो बला टल गई, रात भर
करता था बस–खर्र र्र खर्र र्र खर्र र्र ।'*



* श्री सुमित्रानन्दन पंतकी एक महान रचनाकी पाठ भेद सहित लघु-अनुकृति ।

अमृत घट

अगर हर साल नहा
तो कम से कम
हर युग मे मथ मथ कर अमृत घट निकाले ही गये हैं।
साथ साथ विष की एटमी आग
युग की देन!
चर्चा दिया है सदा देवता (?) की पार्टी ने
अ-सुरो ने मुँह फाडा है केवल मत देकर
हाथ आई निदिया निकल जाने पर।

७

आज भी
अमृत घट हाज़िर है।
पन्द्रह अगस्त सैंतालिस को
मथ कर निकाला गया है जो—
जिसमें भरा है अमृत—
मेम्बरी का टिकट
लीडरी की शक्ति विकट
ससद् का भत्ता
कान्फ्रेन्सों का रेल भाड़ा
दावतों का निमत्रण
रिक्मेण्डेशन का निर्विकार अधिकार—
घर बैठे आनन्द का भण्डार
'जी हाँ सरकार' कहने वालों का जन सागर अपार
धुँआधार भाषण की तह-पर-तह
धर्म, राजनीति, दर्शन, शिक्षा, सस्कृति, कला विज्ञान
(रातोरात सबके विशारद !)
जो कुछ मन भाये
सब कुछ कह !!
अमृत घट वह
हाई लेविल फर्स्ट क्लास।

सभी 'सुरासुर' पार्टीबाज़
दौड़ते है—
हथियाने उसे
मुँह बाये, कमर कसे।
अन्तर्राष्ट्रीय मोहिनी के लासे म लसे
रूप से दुरमुसे-ठँसे।

औरों की अक्ल से
कटे, राहु बन गये।

कोई नहा ऐसा
जो विष की एक झाग भी सहे
नीलकण्ठ बन कर!
फिर—
वाहियात कच्छप का पार्ट करने को ही
कोई कब तक फँसे ?

क्या किया ?

थर्ड क्लास भी
न मिला।
ख़र्च राह का।
मारता
कुलाँच
शौक़ वाह्-वाह का।
शून्य था दिमाग किन्तु जुट गया।

भाव तो उड़ा दिये
मिले न
तुक़ मगर—

फैल तब भुजा
गई
औ खुल गये अधर ।
एक पक्ति जोड सर पटक दिया ।

रात बीतती गई
प्रभात
जब खिला
जीत तन सके
प्रचट
काव्य का क्रिला
मिडा दिया अजीब एक क़ाफिया ।

पर न जम सके
अनन्त
तालियाँ पिटीं
हम उखड गये
तमाम
हसरतें मिटीं
कि तब तलक 'सभापतो' ने झट उठा दिया
उबल पडे यही कहा कि 'क्या किया—?'*



---

* बच्चनजीकी एक रचना उपरोक्त कविताकी 'मम्मी' होनेका दावा कर सकती है !

एक कील का वक्तव्य

सुनो !
सुनो ! ओ राजपथ के आने जाने वाले नागरिको
सुनो ।
मै कील पुकारती हूँ तुमको
सुनो ओ नागरिको !
अभी इधर से एक तेज़ दौडता हुआ घोड़ा–
–टैगोरी दाढ़ी-सा हवा में लहराता
'सद्भावना मिशन' की तरह सनासन्न
इस देश से उस देश चक्कर काटता,
प्रयोगो की ऊँची उडानो पर भी नये रिकार्ड स्थापित करता
नारो की तरह रह-रह ठुनुक-ठुनुक नाचता

आन्दोलनो की जनाधी सा उन्मत्त-
तुमने देखा होगा—
वह अश्वमेध के लिए छोड़ा गया घोडा ।
सुनो ! सुनो !
मैने ही उस घोडे को इतनी दूर दौडाया था
मैदानों पहाडों में झॅकाया था ।
सुनो सुनो !
मैने ही उसे दिशा दिशा चक्कर कटाया था
मैने ही स्वय घिस घिस कर
उसे आँधी सा उन्मत्त बनवाया था ।
सुनो सुनो ! ओ लौटते हुए नागरिको, सुनो
आज वह अश्वमेध का घोडा, लडको के बहकावे मे आ
मेरी सेवा लतिया कर आगे निकल गया है ।
सुनो सुनो ! ओ नागरिको !
मैने ही वह घोडा—ये लडके—
मेरी सेवा—

आह ! कोई नहा सुनता
सुनो मेरे मोचियो !
अश्वमेधी घोडे की नाल से
छूटी हुई इस कील को
क्या तुम भी न लोगे ?
ओ मेरे चिरन्तन साथी !
ओ मेरे मोची !!
मुझको उठा लो, हटा लो
नहीं तो विजय श्री आते-आते इन लडको के
पॉव को ख़ून से लथपथ कर डालूँगी ।

सुनो सुनो ! मेरे कारीगर भाई
अपने इस झोले-जैसे मुहल्ले में मुझे भी दो थोडी-
सी समाई ।
ओ अश्वमेधी घोटे से भी प्यारे !
'मोची काम बूट पालिस' के उठते हुए नारे !
ओ सडकों पर चक्कर काटते हुए मेरे दुलारे !
ओ मेरे साथी !
ओ मेरे मोची !
कोई मुझे नहीं मानता
क्या तुम भी न मानोगे ?



ताजमहल

दालमोट का नगर आगरा
चलता है
तेरे नामो पर ताज !
नहीं तो कौन पूछता आज ?
कोसो दूर दिखाई देता
चिल्लाता है गला फाड कर
अपने यश का गान खडा यह ।
(आत्मश्लाघियो का गुरु बना !)
पडा दिखाई
खिली चॉदनी फैली
जैसे महाकाय दधिकुण्ड लपेटे हो

८

झीनी झीनी-सी एक मलाई की ही चादर ।
बाहर लाल दिवारें घेरे
जैसे सिकी डबल रोटी के बीच
धरी मक्खन की टिकिया ।
हम नौसिखिया
अन्दर आने से घबराते
डर भी जाते ।
यह वह कब्रिस्तान जहाँ लगता अब भी भूतों का मेला ।
सोच, वहीं
मर जाती नानी ।
घूम रही हैं प्यासी रूहें
पाने को प्रेमी जन से
वह अपना-अपना साफा-पानी ।
कहीं न हमको ही अपना ले समझ हरम का रसमय मिश्री ।

देखा
अब भी कितने आते
तीरथ करने
और कब्र पर गिरती जाती
टन टन-सी
कभी इकन्नी
कभी दुअन्नी
कभी चवन्नी !
सोच रहा हूँ
जादू वह, जो सिर चढ़ बोले ।
मरे बहुत दिन हुए
मगर तुम भूल न पाये

ओ नरेश !
अपना ख़िराज ।
देते आये थे पहिले भी
अब भी हम देते जायेंगे
इससे हम न उत्तर पायेंगे ।

तुमने अपना प्रेम ढला कर साँचे म
कर डाला
आख़िरकार उसे इतना क्यूँ सीमित ?
प्रेमी पल्टन के उन्नायक !
छोड गये हो अपने वारिस
भारत की इस पुण्य भूमि म
अनगिनती ही बेटे लायक !!
आज सभी मेम मुमताजमहल बनने को उद्यत
शाहजहाँ पर फटेहाल है
कहाँ मक़बरा बनवा पावें ?
तुमने अपना काम अधूरा जो छोडा
वह आज उठाया है
इन 'हिन्दुस्तानी फिल्मि' बनानेवाले
निर्माता, अभिनेताओं ने—
अपना प्राण लगा देंगे
पर पैदा ही करके छोडेंगे
लैला मजनू की असरय जोडी जनता मे ।



गुटुर गुटुर गूँ एक सेल्फ डिफेन्स

उस दिन मेरे छज्जे पर आ बैठ गया
मनहूस कबूतर
बहुत उड़ाया, फिर धमकाया
किन्तु गुटुर गूँ करने से वह बाज़ न आया।
मैंने समझाया—
'तुम मैना होते
घर-भर से कुछ बातें करते।
होते तोते—
तब भी राम नाम तो मुख से लेते।
और लाल ही यदि हो पाते
बच्चों का ही मन बहलाते।

तुम बटेर ही जो बन आते
तुम्हें पाल कर हम चटपट नवाब कहलाते।'
सब बतलाया
किन्तु गुटुर गूँ करने से वह बाज़ न आया।
बोल उठा मनहूस कबूतर
'गुटुर गुटुर गूँ गुटुर गुटुर गूँ
लाल देश से आता हूँ मै
लाल देश को जाता हूँ मै
तुम्हे शान्ति का पाठ पढ़ाने आया हूँ मै
गुटुर गुटुर गूँ गुटुर गुटुर गूँ
शान्ति कबूतर बोल रहा था।
तुम मुझको मनहूस कह रहे
मै ही था वह जिसके कारण
राधा की लुचलुच सी गर्दन थी कपोतग्रीवा कहलाती
मै ही हूँ वह जिसके कारण
हर सलीम से नूरजहाँ हँस कर फँस जाती।
कितने चित्र बनानेवाले मेरे कारण—
बनते है प्रभुराज पिकासो!
कितने बिगडे दिल की चिट्ठी दूर-दूर तक है पहुँचाई
है कितनो की जान बचाई
गुटुर गुटुर गूँ गुटुर गुटुर गूँ
तुम मुझको मनहूस कह रहे
अरे बूर्जुवा कल्चरवाले हिन्दुस्तानी!
प्रतिगामी।
डालर के नोटो का सुट्टा पिये मदकची।
हाथो म सत्ताख़ोरों—
आदमख़ोरों के
खेल रहे हो अरे गँजेडी

अरे भँगेडी !
कभी वोडका भी छक कर तो देखो प्यारे।
गुट्टर गुट्टर गूँ गुट्टर गुट्टर गूँ
शान्ति कबूतर बोल रहा था।
[ज़ाहिर है गाली तो इससे बेहतर मैं भी दे सकता था।]
लेकिन सीटी बजा-बजा कर मैंने
पूसी को बुलाया
गोदी म अपनी बिठलाया।
शान्ति कबूतर बोल रहा था
'यह कैसा मनहूस जानवर ?
मे इससे नफरत करता हूँ !!
मै परचो से, गोली औ बन्दूक़
पहाड़ो-जगल और समुन्दर से भी उतना डरता नहीं
कि जितना इस पूसी बिल्ली से।
प्रगतिशील तत्त्वों की यह कुल्टा विरोधिनी !
हम सब का यह किया धरा चौपट कर देती
खेतिहर के घर की गायो का दूध चुरा कर पीनेवाली
शोषणवादी !
गुट्टर गुट्टर गूँ गुट्टर गुट्टर गूँ
काश, तुझे हम मार मार कर !'
तब तक मेरा ज़रा इशारा पाकर
पूसी उस पर ऐसा झपटी
उसकी गर्दन, इसका पजा–
किन्तु शिकजा छूट गया था
'गुट्टर गुट्टर गूँ गुट्टर गुट्टर गूँ' चिल्लाता वह भाग रहा था
मै पूसी को सहलाता था–
'कोई बात नहीं, जाने दो
कल तो आखिर फिर आयेगा।'

ओ पिया, पानी बरसा ।

[एक बरसाती बुलेटिन]

[पिया सो रहे हैं। प्रियतमा रातभरकी वर्षा के बाद यह बुलेटिन गाकर उन्हें जगा रही है।]

ओ पिया, पानी बरसा।
यहाँ वहाँ—
सीतापुर, जौनपुर, सुल्तानपुर, फूलपुर, फ़ैज़ाबाद
सब कहीं-बीस कहीं बाईस इंच
सुनते हो, रेडियो क्या कह रहा है ?
पुरानों को छोड़, बाढ़ भी नये स्तर क़ायम कर रही है !
सड़कों पर चलती है नावें बड़ी दूर दूर
वेनिस हो गये हैं ये जौनपुर फूलपुर।

आसमानी उडाने ही भरते हैं
रक्षक हमारे-बेचारे मजदूर !!
अपनी यह पक्की छत भी
तुम्हारी अनयन विरहिणी की तरह
बूँद-बूँद सिसक रही है।
इन्द्र की द्रवित-उदार-घोर कविता सी सीलन
फर्श और दीवारो पर
किताबों पर, चित्रो पर
कपड़ों पर, लत्तो पर
फैल रही है पकड़हीन-कल्पलता की तरह।
घर बनता जाता है टापू
समुद्रो के बीच रहनेवाली रानी की रोमांटिक कल्पना
लगती है भयावनी !
नाव में रमा है पानी,
मरती है नानी
[बेचारी रोज़ मरा करती है]
तुम हो कि
बादलों के मेघ मन्द्र गर्जन म–
विद्युत् के नर्तन मे–
सुधि की बौछारो मे पायल सुनते-से–
ओंघ रहे हो–
कहा ऐसा न हो कि
ओ पिया !
लिया दिया सब कुछ छियातिया हो जाय।

लगता है डर सा
घर यह बने कहा सहसा

मुगलकालीन खँडहर सा
डालों पर मानुस लटके बन्दर सा ।
घटना घटेगी नहीं जब तक
जियें मरेंगे नहीं——

तब तक नोटिस न लोगे
ओ पिया, पुलिस अफसर-सा !!
सुनते हो——
ओ पिया !
[पुकार कर]
पा ऽ ऽ नी ऽ ऽ ब ऽ ऽ र ऽ ऽ सा !!



मेसर्स मित्र एण्ड सन्स

बाज़ार में राह चलते
उस दिन किसी ने
मेरी साइकिल की टोकरी मे पर्चा फेंका था—
'मेसर्स मित्र एण्ड कम्पनी
(दोस्ती के अन्यतम व्यापारी !)
हर तरह का माल यहाँ बिकता है—
हँसी मज़ाक, प्यार, हमदर्दी, बचैनी
धूमधाम, ठहाके,
ऊँचे-नीचे सहारे
हर बात पर पीठ ठोंकने वाले हाथ,
चुभनेवाले छोटे-छोटे वाक्यो के नश्तर,

कसमसाता हुआ भीतर ही भीतर
घुटनवाला तीखा दर्द
आँसू पोंछनेवाले रूमाल
झूठे हाँ को ना समझाने वाली अक़ल
नक़ली कर्टसीवाले चेहरे
कतरनी सी पीठ पीछे चलनेवाली ज़बान
माने या न माने—
आपको सस्ते और उचित दामों पर दोस्ती का सौदा
हमारे यहाँ मिलेगा।
आज़मा कर देखिए
अपने सौदे से आपको सन्तोष दिलाना हमारा काम है
आइए—एक बार आइए!'

पर्चे को जतन से मैंने अपने पर्स में
रख छोड़ा है—
अपनी वर्षगाँठ के दिन
उस पर्चे को मैंने अपने आपको,
उपहार देने के लिए सोचा है।



प्रबुद्ध और प्रबुद्धू

एक था प्रबुद्ध।
उसने बड़ी मेहनत से बनाया एक ख़ोल—
ख़ूब सख्त, पुरता सीमेंट सा।
लोहे के चने भले ही चबा जाँय
पर उस ख़ोल पर दाँत आज़माना
बुढ़ापे को खुले आम था बुलाना।
दाँतप्रूफ़ ख़ोल को बना कर उस प्रबुद्ध ने
थोड़ा-सा गुदगुदा गूदा भीतर धर
जतन से उसे फिर वैसे ही बन्द किया।
लटकाया अपने दरवाज़े पर ख़ोल को
घोषित कर 'प्रबुद्ध की तपस्या का जीवन फल।'

ज्ञान की खोज में निकले
कुछ प्रबुद्धुओं ने देखा वह करिश्मा-सा जीवन फल।
मुफ्त हाथ आता देख
[मन ही-मन गाली दे !]
लपक कर तोड़ा उसे।
मुँहचियार, कई बार दाँत काट खाया।

नोचा, खसोटा उसे
उठा-उठा दे मारा—
पर वह 'जीवन-फल'
'माइक' के सामने 'हटित नेता की भाँति',
अक्षुण्ण हो बना रहा।
दाँतों पसीना आया
देख कर प्रबुद्धुओं ने उठाई मिल
पत्थर की एक सिल
ले जाकर पटक दिया उस जिद्दी ख़ोल पर—
पिचनी हो गया—वह जीवन-फल
चोला और आत्मा का चूरन
खोल और गूदे का समिश्रण
अनाडियो के तोडे अखरोट-सा
बिखर गया चारों ओर।
नमित ज्ञानार्थी प्रबुद्धुओं ने
विजय श्री दिलानेवाली
पत्थर की सिल को प्रणाम किया।
चखा जीवन-फल को
कडर-कडर करके वे
ख़ोल को चबा गये।

पा गये गूदे का अश भी कहीं
तो हँस बोले
'भीतर से था तो कुछ
(पर) पता नहीं क्या था ?
मुँह फिर बनाकर इकहत्तर कोने का आपस मे
कहने लगे
वैसे है गरिष्ठ बहुत
निश्चित ही पाचन क्रिया में व्याघात पहुँचायेगा !!'



मौत एक और पहलु

यह जो तुम स्वर्गीय (?) हुए—
ख़ूब हुए ।
रेडियो ने सुबह शाम जिसको दुहराया
गुहराया
तुम थे यश काय
स्वभाव से बिल्कुल गाय
सुना, मारा था तुमने किसी पटवारी अधिकारी को
जब थे तुम निरीह ग्रामीण ।
तब से जीवनभर लीडरी का ही तुमने किया व्यवसाय ।
सारा देश तुमने हवाई जहाज़ मे नापा
देश का कोना-कोना तुम्हारे वक्तव्यों मे काँपा

अख़बारों ने तुम्हारा जीवन चरित छापा
मोटी हेडलाइस के नीचे हँसते हुए फोटोग्राफ़—
[बचपन से बुढ़ापे तक के–
   मारते हुए पटवारी से लेकर
   श्रमदान के लिए उठाये हुए फावड़े तक के !
कैमरा मात्र ही जीवन था तुम्हारा ।
कॉलम-पर कॉलम लेख छपा
[जो पहिले ही से
हर प्रेस मे कम्पोज़ हुआ रक्खा था ।]
सब पढ़ सुन
दफ्तर जो पहुँचे
तो यह जाना—
आज मरी छुट्टी है ।

इतवार के दिन भी
बैलों की तरह काम करानेवाली कुर्सियो पर
शोक प्रस्ताव पास कर
सिगरेट बॉटते हुए
आज लोग वक़्त काटने के लिए
दियासलाइयाँ उछाल कर खेल रहे है ।
कुछ जो घर गये
अपनी बीबी बच्चो के पास दिन बितायेंगे
घर का सामान लायेंगे
[हॉ यदि दूकान भी बन्द रही, तो
ज़रूर तुमको याद फरमायेंगे]
मरी छुट्टी मनायेंगे !
खा पीकर सो जायेंगे ।

जी कर जो दे नहीं पाये तुम
आज—
एक क्षण को ही सही
किसी क़दर
तुम्हारे नाम पर ज़रूर पायेंगे।

दीवार के आर-पार एक दृष्टिकोण

इस चौड़ी दीवार के उस पार—
तुमने भी रात दिन चक्कर लगाये
विरह के लोकगीत गाये
लट छितराये—
आँसू बहाये—
और दीवार के इस पार
मैंने 'रोमांटिक-लिरिक' सुनाये
सिगरेट सुलगाये
फ़िल्मी गीत गुनगुनाये
'जिया चैन ना पाये
हो राजा ऽ तुम ना आये।'

छटपटाये
कई बार जाकर दीवार को माथा नवाये, छू आये।
गले तक ऊँचे इस दीवारी-पर्दे के आर-पार
जो दो मुँह दीखते थे
उस पर दोनों ने ही मिलन की विवशता के
भाव दरसाये।
'लट छितराये
आँसू बहाये—'
'जिया चैन ना पाये—
हो राजा ऽ तुम ना आये।'
कि

एक दिन सहसा यह बेहूदी मसख़री दीवार
जाने क्या सोच कर भहरा पड़ी बदमाश—
पर्दा जो कुछ था वह बिना नोटिस हुआ फ़ाश!

सहसा
मेरी ओर पीठ फेर कर
घुटने टेके एक घोंचू-सी गठरी को
तुम समझाने लगीं
'प्यारे!
यह सब तो तुम्हारे ही लिए गाती थी
तुमको ही रिझाती थी—
बियोगन का भेस धर
सैयाँ, मैं तुमको ही
आँगन से छत पर बुलाती थी।'

और दीवार के इस पार
मैं अपनी गठरी को समझा रहा था

'सच मानो जो कुछ मैं गाता था
सिर्फ इसीलिए कि तुम्हें भाता था
इन फ़िल्मी धुनों में मैं तुम्हें पाता था
सच मानो
इन्हें गुनगुना कर मुझे बडा चैन आता था।

।'
ओह ! ये बेपर्दगी ?
घबराओ मत
यह दीवार का पर्दा
गले तक मै फिर खिचवा दूँगा।'

पुरानी ईंट और नया पोर्टिको

चारों तरफ खुले हवादार चमकीले खुशनुमा
फूलों से भरे छोटे-छोटे नये बँगलों के बीच
मज़बूती लखौरी ईंटों की परम्परा में चुनी हुई
बाहरी हवा के ताज़े झोंकों से बचाने वाली
हर कोठरी असूर्यम्पश्या
नये के स्वागत में बन्द रहने के समर्थवान
गोल फुल्लीदार अटसमस दरवाज़े
कुची आँगन से दिखने वाले को
आस्था के नाम पर लोटा भर
तुम्हारी अठारहवीं सदी की [
पुरानी-पीढ़ी के के

गुड्डे की बोतल

प्लास्टिक की चमकदार फ़ार्क वाली
छोटी-सी आलपीन जैसी मुँह वाली
नीली-नीली
अठपहलू,
'इवनिंग इन पेरिस' की ख़ाली शीशी
बेबी के हाथ लगी ।
हाथ मे लेकर वह उसे बहुत देर सहलाती रही—
नचाती रही—
उडी ख़ुशबू सूँघ—
शीशी के भरे होने की झूठी तृप्ति लेती रही
कपडो से रगडती रही

गन्ध का स्पर्श सुख लेने को।
सोचती रही
अपनी इस प्रियतमा शीशी का कैसे उपयोग करें ?

सावन की रात !
काले-काले हाथी जैसे बादलों से
आसमान केले के जगल सा भर उठा
होने को थी बरसात
सूखी 'कमल छाप' धरती
हाथियो का यह सरकस निहार रही थी।

बेबी ने सोचा
[इटलेक्चुअल थी ! सोचती ही !!]
इस ख़ूबसूरत शीशी को
वह गुड्डे की बोतल बनायेगी
बादलो से बरसने वाला अमृत भर
वह अपने गुड्डे गुड्डियो को सदा के लिए
मौत के झझट से छुट्टी कराएगी।
और—
आँगन के बीचोबीच
शीशी को एक स्टूल पर रख
[ताकि बरसने वाले पानी की हर बूँद
सिर्फ उस शीशी में ही भर जाय]
बेबी अपनी माँ की गोद से चिपट
आँख बन्द कर
परियो के देश जा पहुँची।

गिरने लगी
बड़ी-बड़ी बूँदें तड़ तड़ तड़
रात भर उमड़ उमड़
बादल गरजा किये ।
जन शान्ति के लिए गरज-गरज अपने मतभेद
आसमानी दुनिया में सारी रात
पूरब और पच्छिम के बादल सरजा किये ।
अक्सर यह कड़क सुन
सोते में चिहुँक उठती बेबी
बिना आँख खोले
[डर के मारे !]
अपना सिर और भी गड़ा लेती माँ के हमदर्द गर्म घोंसले में ।

सुबह की चटकीली धूप ने देखा
घर का कोना-कोना रात की
रस वर्षा में डूबा था—
एक वही छोटी-सी आलपीन जैसी मुँह वाली
नीली नीली अठपहलू
'इवनिंग इन पेरिस' की गुड्डे वाली बोतल
एक बूँद भी नहीं पा सकी थी ।

बिस्तर छोड़ते ही बेबी ने
लपक कर अपने गुड्डे की बोतल उठाई—
उसकी नीली नीली अठपहलू
गुड्डे की बोतल
उसी की तरह एकदम सूखी थी !!

११

उदास खिन्न मन
वह बोली
'मा ऽ !
क्या कल रात पानी नहीं बरसा था ?'



एक मार्क्सवादी प्रेम-पत्र

ओ तुम !
[मैं तुमको क्या कहूँ कुछ समझ मे नहीं आता ।
ज़ाहिर है तुम मेरी प्रेयसी हो
पर पता नहीं तुम्हे यह 'आइडिया' पसन्द आये कि न आये
इसलिए—]
ओ तुम !
चटकीली लाल जार्जेट की साडी पहिने
सलमे सितारों वाली
मै तुम पर लट्टू हूँ
मेरी लाल धरती !
ओ हँसिये सी आँख वाली

डोरो मे वर्ग सघर्ष की लाली
बलशाली हथौडे-सी दाँत वाली
ओ अहमदाबाद मिल मज़दूरो के माथे पर
चुचुवाई पसीने की बूँद-सी
सरल, तरल।
मै मज़दूर यूनियन की सेक्रेटरी पद का लोलुप
मै फिर कहता हूँ
मैं तुम पर लट्टू हूँ
श्रमित, थकित
किन्तु नाचता ही जाता है जो।
ओ तुम ! हमारे नारो की गूँज सी उठती जवानी लिये !
सर्वहारा वर्ग की थकन मिटाने को
फिल्मी एक्ट्रेसो-की सी मधु मुस्कान वाली
तुम्हारे कार की रफ्तार बारबर वोल्गा की गति से
नियत्रित है।
मै सच कहता हूँ
तुम्हारा बाप ही एक ऐसा पूँजीपति है
जिसे हम घृणा नहा करते।
उसे बचा जॉयेंगे
मुझ पर विश्वास करो
[आख़िर तो भी हूँ कर्म का बनिया।]
साथ मे तुम्हारे मै भी मौज से रहूँगा।
गारेंटी करता हूँ
लोक-युद्ध घर मे छिड़ेगा नहीं
आजकल तो शान्ति का मे प्रेमी हूँ।
ओ तुम हिमानी
स्लेज-सरीखे मेरे मन को दौड़ाने वाली
तुम्हें बतलाता हूँ मौज से गिरिस्थी चलाने के लिए

मैंने बनाया है इधर एक पचसाला प्लान ।
सच कहता हूँ
पार्टी की क़सम !
अपने बाक़ी चन्दे की क़सम !!
बोगस रसीदें फाड़ कर अपने जेब में डाली हुई रक़म की
क़सम !!!
मैं अपने को इस लायक़ समझता हूँ
चली आओ
ओ तुम
कम ऑन, कम ऑन, कम ऑन !



कुँआरापन एक सलाह

यह शबनमी फूल की पँखुरियों सा—
नवम्बर दिसम्बर के महीनो की सुबह की
धूप की पहिली किरन सा—
यह कन्या की विदाई के समय छिलकते दृगो म
आँसुओ की बूँद सा—
यह अनजानी नगरी की परी के मीठे सपनो सा—
यह तुम्हारा कुँआरापन—
सच मानो
मेरे दोस्त !
अब यह 'आउट-आफ़-डेट' है ।

मैंने बनाया है इधर एक पचसाला प्लान।
सच कहता हूँ
पार्टी की क़सम !
अपने बाक़ी चन्दे की क़सम !!
बोगस रसीदें फाड़ कर अपने जेब में डाली हुई रक़म
क़म

मैं अपने को इस लायक़ समझता हूँ
चली आओ
ओ तुम
कम ऑन, कम ऑन, कम ऑन !

टेरो लोकगीत अब।
'टैडी' बनो
और कुछ न कर पाओ
तो कम-से-कम
'मैन-पावर' बढाओ।



ज़माने की पार्टी-लाइन बदल गई है
तुम हो कि
चिपके हो पुराने फैशन से अब तक
यही तो है साफ़मसाफ
प्रतिक्रियावाद।
[इसमें रहा नहीं कोई भी
गतिशील तत्त्व मिस्टर !]

कुँआरापन है राजनीति की
जारज सन्तान—
'आउट-डेटेड' टिब्बे में बन्द मक्खन सा
उपयोगिताहीन !
ट्रान्सफर पर गये तो मकान तक मिलेगा नहीं।
चार भले आदमी
शक्की निगाहों से बराबर तुम्हें घूरेंगे।
शौक़ीन तबियत हो
क्लब की 'मिक्सड गैदरिंग' में घुमने नहीं पाओगे।
कविता का कुँआरपन सीमाहीन
बन जाता है गद्य पथ पर आवारागर्दी विशुद्ध !
आशिक़मिज़ाजी और कुँआरेपन में है
पुश्तैनी बैर !

इसलिए
ऐ मेरे दोस्त !
पकड़ो फ़ैशन की डोर
छोड़ो यह क्लासिकल संगीत

टेरी लोकगीत अब।
'टैडी' बनो
और कुछ न कर पाओ
तो कम-से-कम
'मैन-पावर' बढ़ाओ।



दीवारें उठाओ

दीवारें उठाओ
उठाओ दीवारें चारो ओर
शर्म का दान करो
स्वांत सुखाय, निज हिताय
दीवारें उठाओ चारो ओर !
वहम् [अहम् ?] को मूर्त करो
कठियल रसगुल्ले-सा मुँह बनाओ
बातो के जवाब में सिर्फ गर्दन हिलाओ
यह बहुत जरूरी हो, तो ही मुस्काओ ।
रिसियाओ तो भी सिर्फ एकाध

१२

पुतलियाँ नचाओ।
दीवारें उठाओ
उठाओ दीवारें चारों ओर।
अक़्ल से काम लो,
युग की बकरियों से रोब-बेलि मत चराओ
झँझरी के भीतर ही भीतर हरियाओ, मुरझाओ।
दीवार उठाओ
उठाओ दीवारें चारों ओर।

एक छक्काई

शहर मे उस दिन
मची थी काफी सनसनी–
अधिकारी नेता
और लडकों में थी ठनी।
शोर था
'गो बैक मिस्टर अब्दुल गनी'।

पहुँचा बाज़ार

मोलवाया तरकारी जाकर

बोला वृद्ध कुँजडा कुछ आँख नचाकर
'आज रहा 'परदरसन'
निक गया टिमाटर।'



विस्थापित अहम्वाद एक डायलाग

'यह दीप अकेला स्नेह-भरा
है गर्व-भरा मदमाता पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।'
'उँहुँक!'
'दे दो'
अच्छे बेटे दे देते है।
'ऊँऽऊँऽऊँऽऊँऽऽऽ'
[पुचकार की ध्वनियाँ]
'दे दो
मुन्ना राजा दे देते है
राजा बेटा दे देते है।'

'   '

[घुड़कने की ध्वनियाँ]
'दे दो
हाँ, हाँ, दे दो।'
'   '

शाबाश !'

मै कहाँ जानता था ?

जब-जब मैंने तुम्हे देख
आँखों ही आँखो म
मुसकराने की बाँकी अदा अदा की
जब-जब मैंने तुम्हें देख,
ठडी ठडी सिसियाहट की आहें-भरी
जब-जब मैंने तुम्हें देख
धडकनों से भरे मासूम कलेजे को
हर क़दम थाम थाम लिया,
जब-जब मैंने तुमसे
धीरे, किन्तु साफ़-साफ़ लफ़्ज़ो मे
प्रणय निवेदन किया,

जब-जब मैंने कनफुसकियों में
पार्क की बेंच पर साथ बैठ
गुनगुनाया
'हाय प्रिया ! तूने तो जिया लिया ।'
—तब तब तुम
बराबर मुसकराती ही रही ।

हाय राम !
तब मैं कहाँ जानता था कि—
यह मुसकराना तो सिर्फ शिष्टाचार है
तुम तो 'शार्ट साइटेड' हो
और
ऊँचा सुनती हो ।



मजाकिया परमाणु

क्योंकि कहा था उनसे परमात्मा ने–
'देखो ! यह सबसे है अमूल्य वस्तु !'
इसलिए चलने लगे तब
अँगोछे में बाँध कर अक्ल वहीं रख आये
कोने मे छिपा कर।
आये यहाँ तो उसी का पडा काम !
हुए हैरान
तर्क का जवाब वह देने लगे डंडे से।
अपनी दुर्दशा देख, रक्षार्थ
लोगों ने अपनाया मज़ाक का ब्रह्मास्त्र—
नाक मे उनकी आ जाता दम

दाँतों पसीना आता
किचकिचा उठते
हिचकियाँ बँधतीं
नथुने कभी फूलते पचकते,
आँखों में आग्नेय ज्वालाएँ उमड़तीं—
पर फूट नहीं पाता,
सारे बदन में तिलमिलाहट वारी—
चुटकियाँ कोई काटता,
सिल्वटें बनतीं,
बरसते जब ज्योतिपुंजवाही मज़ाकिया परमाणु।
बातों में सबसे छनकते वे
मारना भी चाहते पर मार नहीं पाते
[पाते न कोई दाँव !]
काने बैल की तरह हवा में सनकते !
छा गया उन पर मज़ाक का ऐसा भूत—
पेड़ पाल्व, देव-दानव, मानव-मात्र
सभी उन्हें लगते थे मजाक ही करते-से।

हाल यह देख
दया कर परमात्मा ने
उनका अँगौछा ढूँढ़
भिजवा दी उनकी अक़्ल उनके पास।
लेकिन समझ का फेर
उसको भी गहरा मज़ाक मान—
क्रुद्ध हो,
नथुने फुला
फेंक दिया आसमान की तरफ़—
उन्होंने अँगौछा
एक रद्दी-सी गाली देकर।

१३

खब्त

तुम
उँगली की पोरों पर गिनी चुनी
उन चीज़ों में से एक हो
जिन्हें लोग बुरा कहते है, पर समझते अच्छा है
तुम्हारे ही जलने से
चलते है इस बूढ़ी दुनिया के सौ काम !
तुम न होते तो
नेता, कवि, विचारक, दार्शनिक
सड़क की पटरी पर धर ईंट
पुण्यार्थी जनता-जनार्दन को प्रेम से बिठा
संस्कृतिहीन उल्टे छूरे से मूँड़ने

होते सस्कारच्युत हज्जाम !
तुम न होते तो
जाहिलों की बस्ती में–आये दिन–
मचता ही रहता कोहराम आठो याम–
ख़ब्तियों ने यदि न दी होती–
उनके मुँह में लगाम।
तुम फलो फूलो
लहराओ–
तिपतिया की जगली बेल सा
गदराओ
नये अकुर फुटाओ।
जिस डाल को पाओ
उस पर लपक कर चढ़ जाओ–
छा जाओ
नये ख़ब्ती बनाओ–
स्वस्थ ख़ब्तियों की हमे काफी ज़रूरत है।
सिर फिरे वक़्त बेवक़्त ताल ठोकनेवालो को जो
बतायें अजाम,
पहिनाये लगाम,
दें कुछ नया पैगाम वैगाम !



अहम्वादियो का संयुक्तमोर्चा
उर्फ़
मिनिमम एग्रीमेंट

'आओ दोस्त, आओ,
हाथ मिलाओ
लो पान खाओ !
मत भेद ?
उसकी मत करो फिक्र
वह तो है हमारे अहम् की खाद
जितना ही डालोगे उतना ही पनपेंगे ।
आख़िर ये–मनुजता, सन्तृति, अन्तर्मन,

मानव-मूल्य, युग-धर्म, अर्धसत्य, शान्ति
और प्रगति आदि शब्दों के जब तक कोई अर्थ नहीं
तब तक हम आप उन्हें साथ साथ
क्यों न डट कर इस्तेमाल करें ?
आओ दोस्त, इसलिए आओ !
दरअस्ल हमारे और तुम्हारे
समझौते की शर्त सिर्फ एक है–
वह यह कि
अपने के सिवा हम सबको समझते हैं मूर्ख !
मात्र मूर्ख ।
ख़ालिस मूर्ख !!

और इस पर
मत भेद कभी होगा नहीं ॥'



गुलदस्ते के फूलों का वक्तव्य

इस छोटे से कलात्मक चित्रकारी से भरे-पुरे
गुलदस्ते में–
हरी भरी फुलवारी से
आपने हमें काट-छाँटकर जो ला ठूँसा
उसके लिए हम कृतज्ञ हैं।
अब आपको सन्तोष होगा
कि अपनी देख-रेख में
अपनी काट-छाँट से
आप हम फूलों से कोई सार्थक काम करवा सकेंगे–
चार भले आदमियों को दिखा सकेंगे
कि फूलों के प्रति आपके मन में कितना सम्मान है!!

और हम ?
अपनी जड़ और अपने संगियों से कटे हुए हम–
अब आपकी अनुमति पर
आपके बिजली के पंखे की
भन्नाहट पर थिरकेंगे ।
'ट्यूब लाइट' की रोशनी में खिलने का
अभिनय करेंगे
आपकी तनख्वाह जैसे पानी के सहारे साँस खींचेंगे
और आपका मन बहलायेंगे
आप हम हमारी मुसकान की सार्थकता बतायेंगे ।

पर आपके साथ साथ हमें भी उस स्थिति का भान है
जब हमारी मुसकान पनियल हो जायेगी
और आप ताज़े फूलों के नाम पर
हमें निकाल फेंकेंगे
पर हम सन्तोष की साँस लेंगे–
खाद बन सड़ेंगे और नई पौध के कानों में गुनगुनायेंगे
'बेटा ! ऐसी जगह न जनमना
जहाँ गुलदस्ते के लिए चुन लिये जाओ !

पैसे भर दर्द की अनुभूति एक क्षण सत्य

आतशबाज़ी के अनार के करिश्मे सा
एक छोटी-सी गाँठ से दर्द का जैसे नियाग्रा प्रपात फूटता है।
[ठीक वैसे ही जैसे मेरे साहब हँसते हैं
जिसकी वजह से लोग फिरकी की तरह नाचने लगते हैं ।]

कोल्हू के बैल की तरह एक पैसे भर जगह में ही
घूम घूम रमता है
पिटे हुए हीरो की तरह उसी हीरोइन पर बार बार नमता है ।
पद यात्रियों सा घूम फिर सिर्फ़ केन्द्र पर ही थमता है ।

दर्द की उठनेवाली हर लहर से—
लगता है कि मौसम का टेम्परेचर और गिरता जा रहा है

लगता है कि ड्राइग रूम की हर कुर्सी टेढ़ी रक्खी हुई है
लगता है कि रोज़ के मुक़ाबिले आज घर में अधिक लापरवाही
बरती जा रही है।
लगता है कि तरकारी बहुत रद्दी बनी हुई है
लगता है कि जो लोग हँस रहे है
वे सब मेरे इसी दर्द पर हँस रहे है
[और आख़िर उस वक़्त हँसने की क्या बात हो सकती है ?]
क्यों नहा वे अमृतधारा, आयोडेक्स और टिंचर लेकर दौडते ?
क्यो नहा ससार का हर आदमी मेरा दर्द सेंकने के लिए
एक एक अँगीठी सुलगाता ?
क्यो वह रेडियो मे बैठा हुआ इस वक़्त सितार बजाने के बहाने
मेरे इसी पैसे भर दर्द पर हर बार अपना मिजराब ठुनका रहा है ?
क्या उसे दर्द मिटाने की और कोई तरकीब नहा आती ?

दर्द का गुन गानेवाले
कभी इसके जो पडते पाले
तो कथकों की तरह 'नचैइया' भले ही बन जाते
पर 'लिखैइया' कैसे हो पाते ?
तब वे सिर्फ चिल्लाते भिन्नाते भिनभिनाते
दर्द का ये गुन गाने वाले
कभी इस पैसे भर दर्द के जो पडते पाले—
यकीन मानिए
मुँह हो जाता उनका कार्टनिम्ट के हवाले।

१४

कविता वापस लौटाते हुए नये सम्पादक का कवि को एक नोट

हूँ ऽ ऽ ऊँ ऽ ऽ ठीक है। लेकिन भई-
अब तो चीज़ कुछ लिखो नई।
इसम भला क्या बात बनी ?
तुकों की आपने जुटाई है अनी !
अरे मियाँ ! चेतना को उढ़ाओ लिहाफ़।
इस पर टेकनीक की चढ़ाओ गिलाफ !
वही उषा, अरुणा, वही चन्द्रयामा।
इसमें कहीं भी न नैकेट, न कामा।
इसके तो माने भी हैं बिल्कुल साफ़-
कविता को बनाइए हज़रत जिराफ़।

लोगों की पहुँच से इसे करो बाहर–
ऊँची काव्य कोपलें तभी तो सकोगे चर।
कविता को गद्य करो, गाओ
भोंडी आवाज़ में पढ़ कर सुनाओ।
चौंकाओ, कुथ कर माने भिड़ाओ ऽ
श्रोता को शून्यवत् मुँह खुलाओ!
ऐसा कर पाओ तो लिखो-लिखाओ
भेजो छपाओ! नहीं तो जाओ,
[नाक कटाओ !]



मिस्टर टाइमपीस

वक़्त का एटम जैसे ही खण्डित हुआ
उसका कणानुकणानुकणानुकण
लेकर चम्पत हो गये मिस्टर टाइमपीस
बाक़ी वक़्त सब उड़ गया हवा में
औरों के पल्ले पड़ी सिर्फ़ झुँझलाई खीस–
ज़िन्दगी भर अपना वह वक़्त मिस्टर टाइमपीस ने
दिया नहीं किसी को, माँगा बीस-तीस ने !
[इसीलिए समय का चक्र बिना उस टुकड़े के आज तक न
पूरा पड़ा ।]

दुनिया मे सिर्फ वे वक़्त के ही क़ायल थे
वक़्त के मालिक के सदा से वे लॉयल थे।
'अच्छा वक़्त', 'बुरा-वक़्त'
ज़िंदगी को सिर्फ दो हिस्सो में छानते थे।
हर बडे आदमी की तरह
वक़्त के उस नायाब टुकडे को
वे भी पैसे की तरह जानते थे।
मानते थे
खुद को खपाइए
चाहे मर जाइए
पर वक़्त को बचाइए।

वक़्त को बचाने की वे अनेक ट्रिक लडाते थे
दफ्तर की घडी बन्द करके तब वे घर आते थे
सोते तो बन्द घडी पास ही सुलाते थे
घडी की सुई रोक कर ही किसी से बतियाते थे।

पर वक़्त की मार।
दुर्निवार–
वक़्त के ही रोग में चल बसे मिस्टर टाइमपीम।
बक्स मे उनके निकले—
लाखो मिनट, हज़ारों सेकेण्ड, सैकडों घण्टे।
बचे हुए वक़्त के नाम पर
शहर के सैकडो यतीम नेताओ, डाक्टरो, वकीलो
और प्रोफेसरों को ख़ैरात वह मिली।
मिस्टर टाइमपीस की
उसी दिन से तो जय बुली।

ख़ुदा का ठेंगा . एक रुबाई

स्पीच तो
देते थे वे हरदम बड़े ज़ोर की ।
शक्ल मगर
पाई थी एक नम्बर चोर की ।
अक़्ल के नाम
पर मिला ख़ुदा का ठेंगा,
दुहाई में
उचारते थे लेनिन और गोर्की !!



/

चाँदनी का व्यापार

क्यों भई,
क्या किसी को घूस देकर
चाँद पर क़ब्ज़ा नहीं किया जा सकता ?
बेकार इतनी चाँदनी यूँही फेंक देनेवाला कितना मूर्ख है !
शक्कर और मैदे के खुले बोरों की तरह ये चाँदनी—
घी के कनस्टरों-सी उजली ये चाँदनी—
अगर अपने हत्थे चढ़ जाती—
आसमान के दोनों छोरों पर 'शुभ' और 'लाभ' लिखकर
यदि हम चाँदनी को किसी गोदाम में बन्द कर पाते
थोड़ी-थोड़ी चाँदनी रोज़ हम बेंचते—
अपनी कालिख की मिलावट करते

'सुद्ध चाँदनी' की लैबुल लगा
अपने गनेश-लछमी पै चढ़ाते–
बिजनिस बढ़ाते।

पर सच बताओ यार!
क्या चाँद का 'कापीराइट' देने के लिए
वह बहुत रक़म माँगता है?



एक छोटा-सी अजीब प्रार्थना

हे प्रभु !
उम्रों के मालिक
बच्चों को बडा मत कर ।
उनके बडे होते ही हम बूढे घोषित हो जायेंगे ।
कालिख की कूचियों से मुँह रग कर भी
हम ठहर न पायेंगे–
डगमगायेंगे–
बूढे हो
अपनी ही आँखों के सामने देखी न जायगी उठते गुब्बारो
सी उनकी जवानी

ओ उम्रों के मालिक !

शायद हमें भी वे अपने गुलछर्रों-से
उसी तरह-दूर
तालों में बन्द कर रखेंगे,
जहाँ से
हम कभी सुन तक न पायेंगे
स्वर भी,
उस भूले सुख का।

हे प्रभु
ओ उम्रों के मालिक।
इसीलिए बच्चों को बड़ा मत कर-
रहम कर-
उनके बड़े होते ही हम बूढ़े घोषित हो जायेंगे।



माँ-बाप के लिए

बच्चों को बन्द करो
शोर बहुत करते हैं !
हमारी ठिठोली में मुए
आ पसरते है !!
कालेज, अस्पताल और
नर्सरियाँ खुली है जब—
माँ बाप के ही लिए
कम्बख्त क्यो मरते हैं ?

१५

गोचो कोचो

गोंचने का मन होता है–
गोंचो
नोंचने का मन होता है–
नोंचो !
निब ज़रा तेज़ बनवा लो–
फिर–
कोंचने का मन होता है–
कोंचो !!



वीणापाणि के कम्पाउण्ड मे

उस दिन—
वीणापाणि के कम्पाउण्ड मे काफी भीड भाड थी।
नारो मे गूँज रहा था बँगले का बरामदा
बडे बडे पोस्टरो, काले झण्डो से
हसराज चपरासी के होश खता हो गये ।
रोकने, धमकाने की
कोशिश की काफी। पर सब बेकाम
भीड हो गई जाम।
हल्ला बढता जान
हार कर
मन्त्री की भाँति प्रदर्शनकारियो के सम्मुख

हाथ जोड़े
रोष को सरकारी मुसकान से दबाये
गिरते हुए शाल को उठाने का अभिनय-सा करती
देवी सरस्वती ड्राइंग रूम से—
आई बाहर।
देखा उन्होंने एक लम्बा डेपुटेशन—
कमलभ्रमर, अलि गुलाब, चाँद और चाँदनी
किरन, दीप, भँवर, लहर, नदी, नाव, पतवार,
खजन, चकोर, मीन, मोर, उषा, रात, नखत,
सावन सघन-घन, परछाई, आसमान, तूफान,
इन्द्रधनुष जिनकी था नेतागिरी कर रहा,
बोले वे चिल्लाकर—
'माता! हमें नई कविता से निकाल दिया गया है।
युग-युग का दिया हुआ सम्मान, रुतबा,
न जाने कितने मेरिट सर्टिफिकेट, गोल्डमेडल,
सबका सब
कल के छोकरों ने आकर छिनवा लिया है।
हमको बना दिया है पूर्ववत् जड जगम
कमल की औक़ात—
मेज़ पर टिकटिकाती घडी जितनी भी रही नहीं!
आसमान—
उतना भी टिका नहीं जितना है कलमदान।
अब तक कौन-सी मुसीबत थीं जिसमें न थे साथ—
नदी, नाव, पतवार, काली रात, तूफान?
कौन-सा सुख था जिसमें न थे साथ—
अलि गुलाब, चन्दन-सी चाँदनी, सुहावनी?
अब तो सुख-दुख
नई कविता की सरकार इसके बिना भी मान लेती है।

वीणापाणि के कम्पाउण्ड

उस दिन–
वीणापाणि के कम्पाउण्ड म काफी भीड भाड
नारो मे गूँज रहा था बॅगले का बरामदा
बडे बडे पोस्टरो, काले झण्डो से
हमराज चपरासी के होश ख़ता हो गये ।
रोकने, धमकाने की
कोशिश की काफी। पर सब बेकाम
भीड हो गई जाम ।
हल्ला बढ़ता जान
हार कर
मन्त्री की भाँति प्रदर्शनकारियों के सम्मुख

जाओ, इस युग को
ऐसी ही बेगऊरी की ज़रूरत है।'

नेकर पहिन, नई कविता
छमछम पायल बजाती
तरुणी बुढ़िया
जूडा किये

आगे-आगे चलने लगी
पीछे-पीछे था पेंशनयापता डेपुटेशन दल !
तरुणी बुढ़िया से
चपरासी हंसराज ने इनाम पा,
असीसा
'जाओ, कल्याण हो !
कोई मज़ाक़ भी करे इस रूप पर
तो वह भी नई कविता हो जाय।'

दल हँस कर चला गया।
बँगले के कम्पाउण्ड मे
भूखे बच्चे-सा शोर
दूध मिल जाते ही
धीरे से सो गया।



[ज़मीन से जो न दे तनिक भी सम्पर्क !]
हाथों में सफ़ेद दस्ताने
[निकटतम अनुभूति देने में जो बाधक !]
दो चोटियाँ—
एक असली, एक नक़ली बालों की–झब्बेदार ।
आगे बढ़ वह बुढ़िया तरुणी
बेतुक बेताल सी बोल पड़ी–
'टकर-टकर घूरो मत ।
मैं ही कविता हूँ ।
मेरा यह बिगड़ा हुआ रूप
है नये सौन्दर्य-बोध का प्रतीक मात्र ।
कुछ ही दिनों में तुम्हें यही अच्छा लगने लगेगा ।
हो सके तो मुझको सँवारो—
अपना सब कुछ मुझ पर वारो ।'
मन्त्राणी चकराईं
फिर कुछ सोच मुसकाईं
कविता महरानी को भीतर ले धाईं ।
पहिनाया उसे एक नेकर कमीज़
बनाया एक जूडा
पैरों में महावर–तिस पर से पायल !
[उतार दिये सैण्डिल–हाथों के दस्ताने ।]
माथे पर टिकुली कविता सुहागिन के लगा,
कहा–
'जाओ, *आज से तुम्हारा नाम होगा*
'गद्यम्पू गीत'
देखने में सदा ही रहोगी तुम बेशऊर इसी तरह
फिर भी तुम्हारी हर चाल म, ढाल में,
एक लय होगी, एक अर्थ होगा ।

जाओ, इस युग को
ऐसी ही बेगऊरी की ज़रूरत है।'

नेकर पहिन, नई कविता
छमछम पायल बजाती
तरुणी बुढ़िया
जूड़ा किये

आगे-आगे चलने लगी
पीछे पीछे था पेंशनयापता डेपुटेशन दल !
तरुणी बुढ़िया से
चपरासी हसराज ने इनाम पा,
असीसा
'जाओ, कल्याण हो !
कोई मज़ाक़ भी करे इस रूप पर
तो वह भी नई कविता हो जाय।'

दल हँस कर चला गया।
बँगले के क़म्पाउण्ड म
भूखे बच्चे-सा शोर
दूध मिल जाते ही
धीरे से सो गया।



